

केदार नाथ अग्रवाल (मृतक) व अन्य

बनाम

धन्नाजी देवी (मृतक) जयें विधिक प्रतिनिधि व अन्य

13 अक्टूबर, 2004

[न्यायाधिपति अरिजीत पासायत और सी. के. ठाकर]

किराया नियंत्रण और बेदखली:

उत्तर प्रदेश शहरी भवन (किराये पर देने, किराया और बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972-धारा 21 (1) (अ) और (7)-बेदखली का मुकदमा-सद्भाविक आवश्यकता और तुलनात्मक कठिनाई के आधार पर अधिनस्थ न्यायालयों द्वारा बेदखली का आदेश- रिट याचिका- याचिका के लम्बित रहने के दौरान असल आवेदक की मृत्यु हुई- किरायेदार की यह दलील कि पश्चातवर्ती घटनाओं को दृष्टिगत रखते हुए बेदखली के आधार अस्तित्व में नहीं रहे- अपील में यह अभिनिर्धारित किया कि- सद्भाविक आवश्यकता तथा तुलनात्मक कठिनाईयों का प्रश्न चूंकि तथ्यों का निष्कर्ष है पर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता- हालांकि, पश्चातवर्ती घटनाओं पर भी विचार किया जाना चाहिए था- पक्षकारों के अधिकारों का निर्धारण मुकदमा संस्थित होने की तिथि के आधार पर करना चाहिए किन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि पश्चातवर्ती घटना पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया जा सकता है-विधिक वारीसान मृतक के स्थान पर प्रतिस्थापित होने पर अपनी

आवश्यकता अनुसार बेदखली का आवेदन चला सकते हैं- मामले को नए सिरे से विचार करने के लिए उच्च न्यायालय को प्रेषित किया गया।

प्रत्यर्थी-मकान मालिकों ने उत्तर प्रदेश शहरी भवन (किराये पर देने, किराया और बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972 की धारा 21 के तहत आवेदन अपीलार्थी-किरायेदार के विरुद्ध विवादित परिसर जो कि एक दुकान है की बेदखली का आवेदन सद्भाविक आवश्यकता के आधार पर किया। किरायेदार ने इस आधार पर आवेदन का विरोध किया कि मकान मालिक के पास अन्य संपत्तियां भी थीं और इसलिए उनकी आवश्यकता सद्भाविक नहीं था। निर्धारित प्राधिकरण ने आवेदन को इस आधार पर स्वीकार किया कि मकान मालिक सद्भाविक आवश्यकता के आधार पर कब्जे के हकदार हैं तथा अगर दुकान को उनके पक्ष में नहीं दिलवाया जाता है तो उन्हें अधिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ेगा। आदेश के विरुद्ध अपील को खारिज किया गया। उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की गई थी। याचिका के लंबित रहने के दौरान दोनों प्रत्यर्थियों की मृत्यु हो गई। प्रत्यर्थियों की मृत्यु की पश्चातवर्ती घटना को न्यायालय के संज्ञान में इस आधार पर लाया गया कि उनकी मृत्यु होने की स्थिति में सद्भाविक आवश्यकता का आधार अस्तित्व में नहीं रहा। उच्च न्यायालय ने पश्चातवर्ती घटना पर विचार करने से इन्कार कर दिया और रिट याचिका को खारिज कर दिया।

इस अदालत के समक्ष प्रस्तुत अपील में अपीलार्थी-किरायेदार ने यह तर्क दिया कि बेदखली का आदेश सद्भाविक आवश्यकता और तुलनात्मक कठिनाई के आधार पर पारित नहीं किया जा सकता था क्योंकि सद्भाविक आवश्यकता साबित नहीं हुई थी; यह कि उच्च न्यायालय पश्चातवर्ती घटना पर विचार करने के लिए बाध्य था; और उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य था कि वह अधिनियम की धारा 21 (7) के प्रावधानों पर विचार यह निर्णय करने के लिए करे कि क्या विधिक वारीसान अर्थात् आवेदकों की तीन बेटियाँ जो विवाहित थीं और अपने वैवाहिक घर में रह रही थीं को रिट याचिका को लड़ने की हकदार थीं।

प्रत्यर्थी-मकान मालिकों के कानूनी प्रतिनिधियों ने तर्क दिया कि पश्चातवर्ती घटना का कोई परिणाम नहीं था क्योंकि मुकदमें के निर्णय की तिथि मुकदमा/आवेदन की तिथि है। आई. एस. तय करने की तारीख आवेदन/मुकदमे की स्थापना की तारीख है।

आंशिक रूप से अपील को स्वीकार करते हुए, मामले को उच्च न्यायालय को प्रेषित किया, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि:

1.1. निर्धारित प्राधिकरण उत्तर प्रदेश शहरी भवन (किराये पर देने, किराया और बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972 में आवेदकों की सद्भाविक आवश्यकता के बारे में दिया गया निष्कर्ष पूर्णतः तथ्यों का निष्कर्ष है जिस पर इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता।

जहां तक तुलनात्मक कठिनाई का प्रश्न है तो निर्धारित प्राधिकरण ने यह देखा गया कि यदि आवेदको के पक्ष में आदेश पारित नहीं किया जाता है तो आवेदको को प्रत्यर्थागण के बनस्पत प्रत्यर्थागण को बेदखली का आदेश दिये जाने पर उत्पन्न होने वाली कठिनाई की तुलना में अधिक कठिनाई होगी। उक्त निष्कर्ष भी तथ्य का निष्कर्ष है जिसमें कोई हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। [428 - बी-सी]

2.1. पश्चातवर्ती घटना पर विचार नहीं करने से, उच्च न्यायालय ने कानून की त्रुटि के साथ क्षेत्राधिकार की भी त्रुटि की है। पक्षकारों के अधिकारों का निर्धारण वाद या कार्यवाही संस्थित होने की तिथि पर करना तथा वाद/कार्यवाही का विचारण सभी चरणों में वाद/कार्यवाई के प्रारंभ में मौजूद वाद हेतुक के आधार पर करना चाहिए। हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं है कि मुकदमा/कार्यवाही शुरू होने के बाद होने वाली घटनाओं पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया जा सकता है। परिवर्तित परिस्थितियों पर विचार करना न्यायालय का कर्तव्य है व इस बाबत न्यायालय को शक्ति प्रदत्त है। कानूनी रूप से न्यायालय अन्य बातों के साथ-साथ बाद की घटनाओं पर भी विचार तब रख सकता है जब (i) मूल याचित अनुतोष पश्चातवर्ती परिस्थितियों के बदलावा के कारण अनुचित हो गया हो, या (ii) मुकदमेबाजी को कम करने के लिए पश्चातवर्ती घटनाओं पर विचार करना आवश्यक है; या (iii) पक्षकारों के मध्य पूर्ण न्याय करने के लिए ऐसा करना आवश्यक है। [429 - सी-एफ]

2.2. उच्च न्यायालय ने दोनों आवेदकों की मृत्यु होने की पश्चातवर्ती घटना पर विचार नहीं करने में गलती की। उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य के साथ यह शक्ति भी प्रदत्त थी कि आवेदको की रिट याचिक लम्बित रहने के कारण मृत्यु होने पर विचार करता।

लक्ष्मेश्वर प्रसाद शुकुल बनाम केश्वर लाल चौधरी ए.आई.आर.(1941) ईसी 5; पसुपुलेती वेंकटेश्वर बनाम मोटर ओर जनरल ट्रेडर्स,(1975)3 एससीआर 958; गुलाबबाई बनाम नलीन नरसी वोहरा व अन्य, (1991)3 एससीसी483; रमेश कुमार बनाम केशो राम, [1992] पूरक 2 एससीसी 623; शादी सिंह बनाम रखा, [1992] 3 एस. सी. सी. 55; सुपर फोर्जिंग्स एंड स्टील्स (सेल्स) प्राइवेट लिमिटेड लिमिटेड वी. त्याबली रसूलजी (मृत) एलआर के माध्यम से, [1995] 1 एस. सी. सी. 410; पी. श्रीराममूर्ति बनाम वसंत रमन (श्रीमती), [1997] 9 एस. सी. सी. 654; लेख राज बनाम मुनि लाल व अन्य, [2001] 2 एस. सी. सी. 762; ओम प्रकाश गुप्ता बनाम रणबीर बी. गोयल, [2002] 2 एससीसी 256 और हसमत राय और एन. आर. वी. रघुनाथ प्रसाद, [1981] 3 एस. सी. आर. 605, पर निर्भर किया।

रामेश्वर व अन्य वी. जोतराम व अन्य, [1976] 1 एस. सी. सी. 194 [1976] 1 एस. सी. आर. 847 और गया प्रसाद बनाम प्रदीप

श्रीवास्तव, [2001] 2 एस. सी. सी. 604 ए.आरई.आर. (2001) एससी 803, भिन्न।

3.1. उत्तर प्रदेश शहरी भवन (किराये पर देने, किराया और बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972 की धारा 21 उप-धारा (1) के क्लॉज (ए) और धारा 21 को संयुक्त रूप से पढ़ने पर यह स्पष्ट होता है कि जहां मकान मालिक द्वारा सद्भाविक आवश्यकता के आधार पर कब्जा मांगा जाता है और आवेदन के लंबित रहने के दौरान मकान मालिक की मृत्यु हो जाती है, तो उसके विधिक प्रतिनिधि मृतक के स्थान पर प्रतिस्थापित होने पर अपनी आवश्यकता अनुसार बेदखली का आवेदन चला सकते हैं। मृतक की आवश्यकता के प्रतिस्थापन में अपनी आवश्यकता के आधार पर ऐसे आवेदन पर मुकदमा चला सकते हैं। [435 - जी-एच]

3.2. इस मामले को उच्च न्यायालय को इस निर्देश के साथ भेजा जाता है कि उच्च न्यायालय दोनों आवेदकों की मृत्यु होने की पश्चातवर्ती घटना और इस न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 21 उप-धारा (7) के प्रावधानों पर की गई टिप्पणी के आलोक में विचार करेगा। [436 - बी]

सिविल अपीलिय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 41/2000

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के सी.एम.डब्ल्यू.पी. सं.19160/1985 के निर्णय और आदेश दिनांक 6.8.99 से

संजय कुमार सिंह और वी. बी. जोशी- अपीलार्थियों की ओर से

मनोज के. मिश्रा और एन. एस. बिष्ट- प्रत्यर्थिगण की ओर से

न्यायालय का निर्णय न्यायाधीश थाकर द्वारा दिया गया था

वर्तमान अपील विवादित दुकान जो कस्बा रसरा, परगना लखानेश्वर, जिला बलिया में स्थित किरायेदार द्वारा उत्तर प्रदेश शहरी भवन (किराये पर देने, किराया और बेदखली का विनियमन) अधिनियम, 1972 (जिसे आगे 'अधिनियम' से संबोधित किया जाएगा) के तहत निर्धारित प्राधिकरण द्वारा मामला 29/1983 में पारित बेदखली के आदेश जिसे, जिला न्यायाधीश, बलिया द्वारा किराया नियंत्रण अपील संख्या 4/1984 में पुष्टि की गई और सिविल विविध रिट याचिका 19160/1985 में इलाहाबाद में उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई।

अपील में उठाए गए विवाद की सराहना करने के लिए, कुछ प्रासंगिक तथ्य कहा जा सकता है।

धनराजी देवी और जगदेव शाह ने अधिनियम की धारा 21 के तहत एक आवेदन इन अभिवचनों पर दायर किया कि आवेदक संख्या 2 विवादित संपत्ति का मालिक था और आवेदक संख्या 1 उसका पति था। आवेदक संख्या 2 अपने बुढ़ापे के कारण आवेदक संख्या 1 के नाम पर विक्रय पत्र निष्पादित कराया। यह भी अभिवचित किया गया कि आवेदक संख्या 2 ने एक दुकान का निर्माण किया और उक्त दुकान में कुछ समय के लिए कपड़े का व्यवसाय किया। कलकत्ता में उनका कपड़े का व्यवसाय

भी था। चूंकि इसका ठीक से प्रबंधन नहीं किया गया था, इसलिए उन्होंने कलकत्ता जाने का फैसला किया। उन्होंने एक वर्ष की अवधि के लिए अपीलार्थियों को विवादित दुकान किराये पर दी। आवेदन में आगे यह अभिवचित किया गया कि बंगाल में दंगों के कारण आवेदकों को कलकत्ता में व्यवसाय को समाप्त करना पड़ा और उन्हें बलिया लौटना पड़ा। आजीविका का स्रोत तब विवादित दुकान की व्यवसाय करना बना रहा। उन्होंने होजरी व्यवसाय करने के लिए लाइसेंस प्राप्त किया था। इसलिए, उन्हें उक्त व्यवसाय करने और आजीविका कमाने के लिए विवादित दुकान की आवश्यकता थी। यह भी आक्षेप लगाया गया कि प्रत्यर्थी विवादित दुकान में कोई काम नहीं कर रहे थे और उन्होंने केवल आवेदकों को परेशान करने के लिए इसे बंद कर दिया था। इसलिए यह प्रार्थना की गई कि प्रत्यर्थी के खिलाफ बेदखली का आदेश पारित किया जाए।

प्रत्यर्थी-यहाँ अपीलकर्ताओं ने एक जवाब दावा दायर किया। आवेदन में उल्लेखित तथ्य को गलत बताया। इस बात से इनकार किया गया था कि आवेदकों को व्यवसाय के लिए अपने सद्गभाविक उपयोग के लिए विवादित दुकान की आवश्यकता थी।

यह भी उल्लेखित किया गया कि नियमित रूप से किराया दे रहे थे और कई वर्षों से अपना व्यवसाय कर रहे थे। यह प्रत्यर्थी किया गया था कि आवेदकों के पास अन्य सम्पत्तियां भी हैं और इसलिए उनकी

आवश्यकता को सद्भाविक नहीं कहा जा सकता है। इसके अलावा, आवेदकों का कलकता में कपड़े का व्यवसाय था और उन्हें दुकान की आवश्यकता नहीं थी। इसलिए यह प्रार्थना की गई कि आवेदन खारिज होने योग्य हो।

पक्षों की दलीलों के आधार पर और उनके द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करते हुए, निर्धारित प्राधिकरण ने आवेदन को स्वीकार किया और अभिनिर्धारित किया कि आवेदक विवादित दुकान के कब्जे के हकदार थे क्योंकि उनकी आवश्यकता सद्भाविक थी। यह भी पाया कि यदि दुकान उनके पक्ष में नहीं दी जाती है तो आवेदकों को अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। तदनुसार, आवेदकों के पक्ष में और विरोधियों के खिलाफ बेदखली का आदेश पारित किया गया।

निर्धारित प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश से व्यथित होकर, अपीलकर्ताओं ने जिला न्यायाधीश, बलिया के समक्ष अपील की, जिन्होंने अपील को भी खारिज कर दिया और निर्धारित प्राधिकरण द्वारा पारित बेदखली के आदेश की पुष्टि की। जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के खिलाफ, अपीलार्थियों ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया जिसे पूर्वोक्त अनुसार, उच्च न्यायालय ने भी रिट याचिका को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय के समक्ष पश्चातवर्ती घटनाएँ जो रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान सामने आई थीं, अर्थात् प्रत्यर्थी संख्या 3 और 4 (मूल आवेदक) की मृत्यु को अदालत के संज्ञान में लाया गया था हालाँकि,

अदालत ने माना कि उन पर विचार नहीं किया जा सकता है। परिणामस्वरूप अधीनस्थ, अदालतों द्वारा पारित आदेशों की पुष्टि की गई।

इस न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 21 की उप-धारा (7) के प्रावधानों के साथ-साथ हसमत राय और अन्न बनाम रघुनाथ प्रसाद (1981) एसी/7911/[1981] 3 एससीआर 605। मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय के आलोक में 29 अक्टूबर, 1999 को नोटिस जारी किया गया था। इस बीच कब्जे के लिए डिक्री पर अंतरिम रोक भी लगा दी गई। 3 जनवरी, 2000 को अनुमति दी गई, अंतरिम रोक जारी रखने का आदेश दिया गया और अपील की सुनवाई में शीघ्रता लाई गई। 5 सितंबर, 2002 को अंतिम सुनवाई के लिए एक अपील की गई थी और चूंकि कोई भी उपस्थित नहीं था, जिसे अदम पैरवी में खारिज कर दिया गया था जिसे 17 फरवरी, 2003 को पुनर्स्थापित किया गया। 1 सितंबर, 2004 को अदालत के संज्ञान में लाया गया कि विवादित परिसर का कब्जा 22 अक्टूबर, 2002 को अपील खारिज होने के बाद और बेदखली का आदेश पारित होने से पहले ले लिया गया है। इसलिए निर्देश प्राप्त करने के लिए मामले को स्थगित कर दिया गया। 29 सितंबर, 2004 को, जब मामले को सुनवाई के लिए बुलाया गया था, तो प्रत्यर्थियों के विद्वान वकील ने यह तर्क प्रस्तुत किये कि कब्जा प्रत्यर्थियों के पास था। जबकि उक्त कथन को अपीलार्थियों के विद्वान वकील ने विरोध किया।

हमने दोनों पक्षों के वकील को सुना है।

अपीलार्थी के विद्वान वकील ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि अधिनियम के निर्धारित प्राधिकरण ने कानून की एवं क्षेत्राधिकार की त्रुटि की है। विद्वान वकील के अनुसार, आवेदकों को व्यवसाय करने के लिए संपत्ति की सद्भाविक आवश्यकता होना साबित नहीं हुआ है। यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया है कि यदि अपीलार्थियों के खिलाफ बेदखली का आदेश पारित किया जाता तो अपीलार्थियों-किरायेदारों को अपूरणीय कठिनाई होगी तथा उस आधार पर भी, कोई आदेश नहीं दिया जा सकता था। किसी भी स्थिति में, जब उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही लंबित रहने के दौरान आवेदक (पति और पत्नी) दोनों की मृत्यु हो जाती है तो, उच्च न्यायालय पश्चातवर्ती घटना पर विचार करने के लिए बाध्य था और उच्च न्यायालय को आवेदन को खारिज करना आवश्यक था। ऐसा न करके, उच्च न्यायालय ने अवैधता की है जो इस न्यायालय के हस्तक्षेप के योग्य है। आगे यह तर्क दिया कि उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य था कि वह अधिनियम की धारा 21 की उप-धारा (7) के प्रावधान पर विचार यह तय करने के लिए कि क्या आवेदकों के कानूनी प्रतिनिधि याचिकाकर्ताओं-अपीलार्थियों द्वारा प्रस्तुत रिट याचिका को चुनौती देने के हकदार थे। प्रत्यर्थागण द्वारा अपील के इस न्यायालय में लम्बित रहने के दौरान कब्जा लेने के संबंध में यह तर्क विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत किया गया कि यह सही नहीं है तथा अपीलकर्ताओं के पास विवादित दुकान का कब्जा है। इसलिए, यह प्रार्थना

की गई कि अपील को स्वीकार किया जा सकता है एवं निर्धारित प्राधिकरण द्वारा पारित बेदखली के आदेश जिसे जिला न्यायाधीश के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट किया गया को अपास्त किया जा सकता है।

दूसरी ओर, प्रत्यर्थागण के विद्वान वकील ने अधिनस्थ न्यायालय के आदेशो का समर्थन किया एवं यह तर्क प्रस्तुत किया कि पक्षकारों के अभिवचन व लेखबद्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद, निर्धारित प्राधिकरण ने आवेदकों के पक्ष में एक आदेश दिया जिसकी पुष्टि जिला न्यायाधीश और उच्च न्यायालय ने भी की। आवेदन के संस्थित होने के समय आवश्यकता के आधार पर आदेश पारित किया गया। वकील ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि यह सुस्थापित विधि है कि पक्षकार के मध्य विवाद को तय करने की सुसंगत तिथि आवेदन/मुकदमा संस्थित होने की तिथि है तथा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों की ओर से पश्चातवर्ती घटना पर विचार करने का प्रस्तुत तर्क को न्यायोचित नहीं था जिस कारण से आदेश में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है। यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया कि अपील निष्फल हो गई है क्योंकि विवादित दुकान का कब्जा पहले ही प्रत्यर्थागण द्वारा ले लिया जा चुका है जो कि प्रत्यर्थागण की ओर से प्रस्तुत हलफनामे से और इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई तस्वीरों से भी स्पष्ट है। इसलिए यह प्रार्थना की गई कि अपील खारिज की जा सकती है।

दोनों पक्षों के विद्वान वकीलों को सुनकर और विचार करने के बाद कानून के सुसंगत प्रावधान तथा इस न्यायालय के निर्णय पर विचार करने पर हमारी राय यह है कि अपील को आंशिक रूप से स्वीकार किये जाने योग्य है। जहाँ तक आवेदकों की अधिनियम के तहत सद्भाविक आवश्यकता के बारे में निर्धारित प्राधिकरण द्वारा दिया गया निष्कर्ष का संबंध है, तो हमारी राय में यह विशुद्ध रूप से तथ्य का निष्कर्ष है और इस न्यायालय द्वारा इस पर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। इसी तरह, तुलनात्मक कठिनाई के संबंध में, निर्धारित प्राधिकरण ने आदेश में यह व्यक्त किया है कि यदि आवेदको के पक्ष में आदेश पारित नहीं किया जाता है तो आवेदको को प्रत्यर्थागण के बनस्पत प्रत्यर्थागण को बेदखली का आदेश दिये जाने पर उत्पन्न होने वाली कठिनाई की तुलना में अधिक कठिनाई होगी। उक्त निष्कर्ष भी तथ्य का निष्कर्ष है जिस पर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। इसलिए, इन दोनों मामलों में, हम अपीलार्थियों के विद्वान वकील के तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

अब प्रश्न पश्चातवर्ती घटना के प्रभाव के बारे में रहता है। पक्षकारों के बीच यह विवादित नहीं है कि उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, दोनों आवेदकों की मृत्यु हो गई और उनकी तीन बेटियों को रिकॉर्ड पर लाया गया। यह भी विवादित नहीं है कि तीनों बेटियाँ शादीशुदा हैं और वे अपने ससुराल वालों के साथ अपने वैवाहिक घरों में हैं। उक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष किरायेदारों की

ओर से यह तर्क दिया गया था कि उक्त परिस्थिति एक प्रभावी परिस्थिति थी जो कार्यवाही लम्बित रहने के दौरान हुई जिस पर विचार करना चाहिए जो प्रकरण के अंतिम परिणाम को प्रभावित करेगी। किरायेदारों के अनुसार, दोनों आवेदकों की मृत्यु को देखते हुए, आवेदन में आवेदकों द्वारा अनुरोध की गई आवश्यकता बनी नहीं रही और आवेदन अस्वीकार किए जाने योग्य था। यह उच्च न्यायालय की शक्ति और कर्तव्य था कि वह पश्चातवर्ती घटना जो रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान सामने आई पर विचार करें और इस तरह की घटनाक्रम को ध्यान में रखते हुए एक उचित आदेश पारित करती। उक्त तर्क के समर्थन में, विद्वान वकील द्वारा इस न्यायालय के कई फैसलों का आसारा लिया।

इसके विपरीत, प्रत्यर्थागण की ओर से यह तर्क दिया गया कि निर्धारित प्राधिकरण द्वारा पारित डिक्री या आदेश की वैधता मान्यता का परीक्षण पक्षों के अधिकारों के आधार पर किया जाना चाहिए जैसा कि जब आवेदन दायर किया गया था उस समय था। पश्चातवर्ती घटना आवेदकों के निहित और अर्जित अधिकार छीन नहीं सकती।

आवेदकों के उत्तराधिकारियों द्वारा प्रस्तुत आपत्तियों को उच्च न्यायालय ने उचित होना पाया और यह पाया कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान आवेदकों की मृत्यु की पश्चातवर्ती घटना को विचार में नहीं रखा जा सकता है। यह भी पाया गया कि विलम्ब कारित होने पर किसी

पक्ष को दंडित नहीं किया जा सकता है और जब बेदखली का आदेश विधिक रूप से आवेदकों के पक्ष में पारित किया गया था, जिसे आवेदकों की मृत्यु की पश्चातवर्ती घटना पर विचार करके दरकिनार नहीं किया जा सकता है।

उच्च न्यायालय ने यह भी पाया कि रिट याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत न्यायिक निर्णयों जिनमें पश्चातवर्ती घटनाओं को दृष्टिगत रखा गया था, अपील में लम्बित थे। उच्च न्यायालय के अनुसार, एक अपील को 'मुकदमे की निरंतरता' कहा जा सकता है, लेकिन रिट याचिका को नहीं। यह पाया गया कि जब निर्धारित प्राधिकरण द्वारा मामले का निर्णित किया जा चुका है और जिला न्यायाधीश, द्वारा अपील खारिज की जा चुकी है, उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत कार्यवाही में बाद की घटनाओं पर विचार करने की कोई शक्ति प्रदत्त नहीं थी और तदनुसार रिट याचिका को खारिज कर दिया।

हमारी राय में, पश्चातवर्ती घटना पर विचार ना करते हुए, उच्च न्यायालय ने विधि की त्रुटि की है और क्षेत्राधिकार की भी त्रुटि की है। हमारे निर्णय में, इस बिन्दु पर विधिक स्थिति सुस्थापित है, और यह: मूल नियम है कि पक्षकारों के अधिकारों का निर्धारण मुकदमा या कार्यवाही संस्थित करने की तिथि के आधार पर किया जाना चाहिए और मुकदमा/कार्यवाई का विचारण सभी चरणों में मुकदमा/कार्यवाही के प्रारंभ

में उत्पन्न वाद हैतुक के आधार पर किया जाना चाहिए।। हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं है कि मुकदमा/कार्यवाही शुरू होने के बाद होने वाली घटनाओं पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया जा सकता है। परिवर्तित परिस्थितियों पर विचार करना न्यायालय की शक्ति और कर्तव्य है। कानूनी रूप से न्यायालय अन्य बातों के साथ-साथ बाद की घटनाओं पर भी विचार निम्नलिखित परिस्थितियों में कर सकता है:-

(i) मूल याचित अनुतोष पश्चातवर्ती परिस्थितियों के बदलावा के कारण अनुचित हो गया हो, या

(ii) मुकदमेबाजी को कम करने के लिए पश्चातवर्ती घटनाओं पर विचार करना आवश्यक है; या

(iii) पक्षकारों के मध्य पूर्ण न्याय करने के लिए ऐसा करना आवश्यक है।

[री: शिखरचंद जैन बनाम दिगंबर जैन प्रबंध कारिणी सभा और अन्य, [1974] 1 एससीसी 675 [1974] 3 एससीआर 1011]

इस संबंध में सुसंगत न्यायिक निर्णयों पर विचार करते हैं।

लगभग एक शताब्दी से पहले राम रतन बनाम मोहंत साहा, (1907) 6 कलकता एलजे 74: 11 कलकता डब्ल्यू. एन. 732, कलकता उच्च न्यायालय ने यह पाया कि सामान्य नियम के कुछ निश्चित अपवाद हैं कि वाद की कार्यवाही के विचारण पर सभी चरणों में जैसा कि वाद के प्रारम्भ

होने के समय वाद हैतुक उत्पन्न/मौजूद था पर करना चाहिए। लछमीश्वर प्रसाद शुक्ल बनाम केशवरलाल चौधरी (1940) एफ. सी. आर. 84: ए. आई. आर. (1941) एफ. सी. 5, फ़ैडरल न्यायालय ने नवीन अधिनियम जो फ़ैडरल न्यायालय में लम्बित अपील के दौरान लागू हुआ पर विचार किया।

पासुपुलेती वेंकटेश्वरलु बनाम मोटर और जनरल ट्रेडर्स, [1975] 1 एस. सी. सी. 770: एआईआर (1975) एससी 1409: [1975] 3 एस. सी. आर. 958, के निर्णय में इस न्यायालय ने पश्चावर्ती घटना पर विचार किया। वादी ने कब्जे के लिए मुकदमा व्यवसाय शुरू करने के लिए व्यक्तिगत आवश्यकता के आधार पर दायर किया और उनके पक्ष में आदेश पारित किया गया था। उक्त आदेश के खिलाफ अपील भी खारिज कर दी गई थी। किरायेदार ने उच्च न्यायालय में निगरानी याचिका दायर की। निगरानी याचिका के लंबित रहने के दौरान, वादी ने एक अन्य गैर-आवासीय भवन का कब्जा प्राप्त कर लिया। इसलिए, किरायेदार द्वारा संशोधन के लिए एक आवेदन किया। उच्च न्यायालय ने संशोधन की अनुमति दी। मकान मालिक ने इस आदेश को इस अदालत में चुनौती दी। मकान मालिक द्वारा यह तर्क दिया गया था कि उच्च न्यायालय ने बाद की घटना का संज्ञान लेने में घोर त्रुटि की थी। हालाँकि, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय ने पश्चातवर्ती घटना पर विचार करने में कोई अवैधता नहीं की।

लछमीश्वर प्रसाद के अनुसरण में, 'प्राचीन काल' का कानून, न्याधिपति कृष्ण अय्यर, ने यह कथन किया कि:

"प्रस्तुत तर्कों को हम सारहीन होना महसूस करते हैं। सर्वप्रथम क्षेत्राधिकार, परिस्थिति और अधिकारिता जो कार्यवाही प्रारम्भ होने के बाद उत्पन्न होती है। हमारे प्रक्रियात्मक न्यायशास्त्र के लिए बुनियादी है कि अनुतोष के अधिकार को उस तारीख को अस्तित्व में माना जाना चाहिए जब एक दावेदार कानूनी कार्यवाही शुरू करता है। समान रूप से यह सिद्धांत स्पष्ट है कि प्रक्रिया हैण्डमेड ओफ जस्टिस होती है। यदि विवाद संस्थित होने के पश्चात कोई तथ्य उत्पन्न होता है जिसका मूल रूप से प्रभाव अनुतोष के अधिकार अथवा उसकी प्रक्रिया पर पड़ेगा जो कि ट्रिब्यूनल के संज्ञान में लगन से लाया जाता है, तो वह उस पर पलक नहीं झपक सकता है या उन घटनाओं के प्रति अंधा नहीं हो सकता है जो कि विधिक उपचार को व्यर्थ बना देती है। समानता प्रक्रिया के नियमों को बदलाव के लिए न्यायोचित है, जहां कोई विशिष्ट प्रावधान या निष्पक्षता का उल्लंघन नहीं किया जाता है, जिससे पर्याप्त न्याय के विषय को बढ़ावा मिल सके अन्य अनुचित कारकों या उचित परिस्थितियों के कारण। ना ही हम अद्यतन तथ्यों पर ध्यान

देने के लिए इस शक्ति पर किसी भी सीमा पर परिकल्पना कर सकते हैं ताकि इसे विचारण न्यायालय तक सीमित किया जा सके। यदि मुकदमेबाजी लम्बित रहती है तो शक्ति अस्तित्व में है, अन्य विशेष परिस्थितियों के अभाव में जो न्याय होने से पीछे हटाती हो। इस संबंध में न्यायिक निर्णय की विशाल संख्या है जैसा कि इस न्यायसंगत नियमों को लागू करने की परिस्थितियां असंख्य हैं। हम इस प्रस्ताव की पुष्टि करते हैं कि पक्ष द्वारा दावा किए गए अधिकार या उपचार को न्यायसंगत और सार्थक साथ ही विधिक और तथ्यात्मक रूप से भी सार्थक बनाने के लिए न्यायालय को सावधानीपूर्वक कार्यवाही संस्थिति होने की घटनाओं एवं पश्चातवर्ती घटनाक्रम के संबंध में संज्ञान लेना चाहिए जिससे कि दोनों पक्षों के लिए निष्पक्षता के नियम कि पालना की जा सके।”

पसुपुलेती वेंकटेश्वरलू का कई मामलों में अनुसरण किया गया। गुलाबबाई बनाम नलिन नरसी वोहरा और अन्य, [1991] 3 एस. सी. सी. 483 ए. आई. आर. (1991) एस. सी. 1760, में किरायेदार के खिलाफ बेदखली का आदेश सद्भाविक आवश्यकता के आधार पर पारित किया गया था। मकान मालिक के परिवार का अपील के लंबित रहने के दौरान उसके

द्वारा निर्मित एक विशाल बंगले में विस्थापन करने की पश्चातवर्ती घटना पर इस न्यायालय द्वारा विचार किया गया था।

रमेश कुमार बनाम केशो राम, [1992] 2 एस. सी. सी. 623 ए. आई. आर. (1992) एस. सी. 700, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि एक अदालत पश्चातवर्ती घटनाओं का 'सावधानीपूर्वक संज्ञान' लेते हुए अनुतोष दे सकती है। न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि ये सभी तथ्यात्मक और परिस्थितियात्मक भिन्नता पर निर्भर करते हैं और 'कोई भी मामले को कठिन और कठोर रूप से नियंत्रित का नियम नहीं हो सकता।

शादी सिंह बनाम राखी, [1992] 3 एस. सी. सी. 55 ए. आई. आर. (1994) एस. सी. 800, में एक मकान मालिक एक किरायेदार ने इस आधार पर बाहर निकालने के लिए मुकदमा दायर किया कि इमारत की पूरी तरह से मरम्मत की आवश्यकता है। मुकदमे के लंबित रहने के दौरान, किरायेदार ने आवश्यक कार्य के किए मरम्मत करवाया। घटना को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने मकान मालिक के मुकदमे को खारिज कर दिया।

सुपर फोर्जिंग्स एंड स्टील्स (सेल्स) प्रा. लि. लिमिटेड बनाम त्याबली रसूलजी (मृत) एल. आर. से, [1995] 1 एस. सी. सी. 410, के मामले में इस न्यायालय की संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत प्रस्तुत अपील में

पश्चातवर्ती घटनाओं पर विचार देने की शक्ति के संबंध में, इस न्यायालय ने कहा कि "इस न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत एक अपील में घटनाओं का सावधानीपूर्वक संज्ञान लेने की शक्ति है और बेदखली की कार्यवाही संस्थित होने के बाद के घटनाक्रम और न्याय और निष्पक्षता के अनुरूप किसी पक्ष द्वारा याचित गई अनुतोष को देना, अस्वीकार करना या उसे बदलना केवल इसलिए प्रतिबंधित नहीं है क्योंकि वह शक्ति संविधान के द्वारा दी गई है।

पी. श्रीराममूर्ति बनाम वसंत रमन (श्रीमती), [1997] 9 एस. सी. सी. 654: ए.आई.आर.(1997) एस. सी. 1388, में मकान मालिक के पक्ष में और किराएदार के खिलाफ किराए का भुगतान न करने के आधार पर बेदखली का आदेश पारित किया गया था। इस न्यायालय के समक्ष अपील के लंबित रहने के दौरान, मकान मालिक का पति सेवा से सेवानिवृत्त हुआ और उन्हें व्यक्तिगत कार्य के लिए परिसर की आवश्यकता थी। हालांकि यह आधार पहले नहीं लिया गया, पश्चातवर्ती घटनाक्रम को दृष्टिगत रखते हुए, इस न्यायालय ने उक्त आधार को उठाने के लिए अनुमति देकर अनुतोष प्रदान किया।

लेख राज बनाम मुनि लाल व अन्य, [2001] 2 एस. सी. सी. 762 ए. आई. आर. (2001) एस. सी. 996, इस न्यायालय ने यह संकेत दिया कि इस विषय पर कानून अच्छी तरह से स्थापित है। अदालत ने बाद की

घटनाओं को ध्यान में रखते हुए अपने दरवाजे बंद नहीं करने चाहिए। सभी कानून और प्रक्रियाएं अदालतों के दैनिक कार्य के संचालन के सहित जो इसके दरवाजे पर दस्तक देते हैं को न्याय प्रदान करने में सहायता करती हैं। अदालत को कानून की व्याख्या न्याय के अपमान में नहीं बल्कि उसकी सहायता में करनी चाहिए। इसलिए, प्रासंगिक बाद की घटना को अभिलेख पर लाने की अनुमति दी जानी चाहिए ताकि किसी पक्ष को न्याय प्रदान किया जा सके। लेकिन ऐसा करने में अदालत को सावधान रहना चाहिए कि यों ही इसकी अनुमति न दी जाए। उसे उस प्रार्थना को अस्वीकार करना चाहिए जहां पक्ष कार्यवाही में देरी करने और दूसरे पक्ष को परेशान करने या किसी अन्य गुप्त उद्देश्य के लिए ऐसा कर रहा है। अदालत को यह भी जांचना चाहिए कि क्या कथित बाद की घटना में विवादों के लिए तात्त्विक है या मुकदमे के परिणाम को तात्त्विक रूप से प्रभावित करेगी।

ओम प्रकाश गुप्ता बनाम रणबीर बी. गोयल, [2002] 2 एससीसी 256: ए. आई. आर. (2002) एस. सी. 665, में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि: नागरिक कानून का सामान्य नियम यह है कि पक्षकारों के अधिकार मुकदमे के संस्थित होने की तिथि को स्पष्ट रूप से मौजूद होते हैं और इसलिए, मुकदमे की डिक्री पक्षकारों के अधिकारों के अनुरूप जैसा कि वह मुकदमे के प्रारंभ में थे होनी चाहिए। हालाँकि, न्यायालय के पास पश्चातवर्ती घटनाओं पर विचार करने और अनुतोष को ढालने की शक्ति निम्नलिखित शर्तों को पूरा होने पर है: (i) कि अनुतोष,

जैसा कि मूल रूप से दावा किया गया है, बाद की घटनाओं के कारण, अनुचित हो जाता है या नहीं दिया जा सकता है; (ii) ऐसी पश्चातवर्ती घटना या बदली हुई परिस्थितियों पर विचार देने से मुकदमेबाजी कम हो जाएगी और पक्षकारों के मध्य पूर्ण न्याय हो जायेगा; और (iii) ऐसी पश्चातवर्ती घटना को अविलम्ब न्यायालय के संज्ञान में लाया जाता है जाे कि प्रक्रियात्मक कानून के नियमों के अनुसार हो ताकि विरोधी पक्ष आश्चर्यचकित न हो।

रामेश्वर और अन्य बनाम वी. जोतराम व अन्य [1976] 1 एस. सी. सी. 194: [1976] 1 एस. सी. आर. 847, मामले पर प्रत्यर्थागण द्वारा उच्च न्यायालय साथ-साथ हमारे समक्ष आश्रित किया गया। *रामेश्वर* में, पंजाब सिक््युरिटी ओफ लैण्ड टेन्योर अधिनियम, 1953 में किरायेदार डिम्ड खरीददार हो गया। अपील के लंबित रहने के दौरान, 'विशाल' भूमि मालिक की मृत्यु हो गई और उनके उत्तराधिकारी 'छोटे' भूमि मालिक बन गए। इसलिए, अपील में भूमि मालिकों की ओर से यह तर्क दिया गया था कि चूंकि अपील मुकदमे की निरंतरता है, इसलिए मूल मालिक की मृत्यु की बाद की घटना पर विचार किया जाना चाहिए। हालाँकि, इस न्यायालय ने पश्चातवर्ती घटना पर न्यायसंगत कारणों से विचार करने से इनकार कर दिया। कृषि रिफोर्मों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि: "यदि मकान मालिक की मृत्यु किरायेदार में स्वामित्व के निहित होने के बाद किसी लम्बी अवधि

में हो जाती है, ऐसी मृत्यु से, विधिक प्रक्रिया विपरित हो जाती है उसके बच्चे, विभाजन पर, छोटे भूस्वामियों में परिवर्तित हो जाएंगे, जिससे अधिनियम के परिकल्पना पर विपरित प्रभाव पड़ेगा तथा निहित होने वाले प्रावधान 'एक चिढ़ाने वाला भ्रम', बन जाएगा। कृषि सुधार के लिए एक औपचारिक उत्सव, न कि एक 'अभी और यहाँ' का ज्वलंत कार्यक्रम। यह तथ्य विवादस्पद मुकदमेंबाजी में भविष्यवाद की अनुमति नहीं देने की ओर ले जाते हैं जिससे की विधिक लक्ष्यों कलुषित हो सके।

गया प्रसाद बनाम प्रदीप श्रीवास्तव, [2001] 2 एससीसी 604: ए.आई.आर. (2001) एससी 803, में भू-स्वामी द्वारा 1978 में एक बेदखली याचिका अपने बेटे द्वारा क्लिनिक के रूप में उपयोग करने की सद्भाविक आवश्यकता के आधार पर दायर की थी। 1982 में किराया नियंत्रक द्वारा याचिका को स्वीकार किया गया और आदेश की पुष्टि अपीलिय द्वारा की गई थी। उच्च न्यायालय के समक्ष याचिका लम्बित होने के दौरान हालाँकि, बेटा चिकित्सा सेवा में शामिल हो गया। उक्त घटनाक्रम पर निर्भर करते हुए, उच्च न्यायालय के समक्ष किरायेदार द्वारा यह तर्क दिया गया था कि मकान मालिक को परिसर की अब आवश्यकता नहीं थी तथा याचिका खारिज किये जाने योग्य थी। उच्च न्यायालय ने याचिका को खारिज किया जिससे व्यथित होकर किरायेदार ने इस न्यायालय के पास आया। किरायेदार की ओर से यह तर्क प्रस्तुत किये कि पश्चातवर्ती घटनाक्रम को उच्च न्यायालय द्वारा नजरअंदाज नहीं किया जा सकता विशेषकर जब

बेदखली व्यक्तिगत उपयोग के लिए चाही गई थी और अब मकान मालिक के बेटे द्वारा सेवा की स्वीकृत करने की स्थिति में आवश्यकता नहीं रही। इस न्यायालय ने हालाँकि, उक्त तर्क को स्वीकार नहीं किया और यह अभिनिर्धारित किया कि:

" हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि मकान मालिक की सद्भाविक आवश्यकता के बारे में निर्णय लेने के लिए महत्वपूर्ण तिथि बेदखली के आवेदन की तिथि है। पूर्ववर्ती दिनों की शायद उपयोगिता हो सकती है ताकि वह महत्वपूर्ण तिथि तक पहुँच सके। अगर याचिका पेश होने के पश्चात की अवधि के घटनाक्रम को मकान मालिक की सद्भाविक आवश्यकता पर तय करने के लिए विचार किया जाये तो शायद हमारी मुकदमेबाजी की धीमी प्रक्रिया प्रणाली में दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। मकान मालिक द्वारा अपने बेटे की आवश्यकता के लिए बेदखली के लिए आवेदन पेश करने की 23 वर्षों की अवधि के दौरान ना तो मकान मालिक ना ही उसके बेटे को बिना कोई काम किए बेकार रहने की उम्मीद की जाती है, ऐसा न हो कि कोई नया कार्य या कोई नया काम शुरू करना भवन पर कब्जा करने की अपनी आवश्यकता को खोने के लिए जोखिम उठाना होगा। यह एक कठोर वास्तविकता है कि मुकदमे का

जीवन जितना लंबा होगा उतना ही लंबे अंतराल के दौरान होने वाले विकसित घटनाक्रम की संख्या होगी। यदि कोई युवा उद्यमी एक नया उद्यम शुरू करने का निर्णय लेता है और उस आधार पर वह या उसके पिता किसी किरायेदार को परिसर से बेदखल करना चाहते हैं तो प्रस्तावित उद्यम मुकदमें के पारम्परिक लम्बी आयु के दौरान पश्चातवर्ती घटनाक्रम से समाप्त नहीं होगा उसकी आवश्यकता धूमिल हो सकती है, सील अपनी सतह पर चिपकी रह सकती है, फिर भी आवश्यकता बरकरार रहेगी। केवल सील को मिटाने और चमक देखने की आवश्यकता है। यह हानिकारक है, और हम कह सकते हैं कि मुकदमे के सभी पिछले स्तरों से गुजरने के बाद, किसी आवेदक के अंतिम चरण में पहुंचने की ठीक पूर्व संध्या पर उसके सामने दरवाजा बंद करना अन्यायपूर्ण है, केवल इस आधार पर कि कुछ घटनाक्रम लम्बित थे, क्योंकि विरोधी पक्ष मामले को लंबा करने में सफल रहा।”

अब हमें हसमत राय का उल्लेख करना चाहिए। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, इस न्यायालय द्वारा 29 अक्टूबर, 1999 को इस न्यायालय के निर्णय *हसमत राय* को ध्यान में रखते हुए नोटिस जारी किया गया था। उक्त निर्णय में, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने यह कहा कि जब मकान मालिक की व्यक्तिगत आवश्यकता के

आधार पर बेदखली की मांग की गई थी, तो इस तरह की आवश्यकता मामले के अंतिम निर्धारण तक बनी रहेगी। पासुपुलेती वेंकटेश्वरलू में न्यायाधीश देसाई ने यह कहा कि; "यह अब परिवर्तनीय है कि जहां व्यक्तिगत रूप से आवश्यकता के आधार पर कब्जे की मांग की जाती है, यह कहना सही होगा कि मकान मालिक द्वारा अनुरोध की गई आवश्यकता न केवल कार्यवाई की तारीख पर अस्तित्व में होनी चाहिए, बल्कि तब तक भी बनी होनी चाहिए जब तक कि बेदखली के लिए अंतिम आदेश या डिक्री दिया जाता है। यदि इस बीच ऐसी घटनाएँ सामने आई हैं जो यह दर्शाती हैं कि मकान मालिक की आवश्यकता पूरी तरह से संतुष्ट है तो उस मामले में उसकी कार्यवाही विफल होनी चाहिए और ऐसी स्थिति में यह कहना गलत नहीं है कि किरायेदार के खिलाफ ऐसी डिक्री या बेदखली का आदेश पारित किया गया है, तो वह न्यायालय को बाद की घटनाओं पर विचार करने के लिए आमंत्रित नहीं कर सकता है।

स्थापित विधिक स्थिति तथा पासुपुलेती वेंकटेश्वरलू और हसमत राय के फैसलों को दृष्टिगत रखते हुए, हमारी राय में, उच्च न्यायालय ने दोनों आवेदकों की मृत्यु की बाद की घटना पर विचार नहीं करने में गलती की थी। हमारे विचार में, रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान आवेदकों की मृत्यु के तथ्य पर विचार करना उच्च न्यायालय की शक्ति के साथ-साथ कर्तव्य भी था। चूँकि यह किरायेदार का मामला था कि तीनों बेटियों की शादी हो गई और वे अपने ससुराल वालों के साथ रह रही थीं, जाहिर है,

उक्त तथ्य प्रासंगिक और तात्विक था। रामेश्वर में इस न्यायालय द्वारा अभिनिर्णित इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होगा क्योंकि यह कृषि रिफोर्म से संबंधित है। इसी तरह, गया प्रसाद इस मामले को आगे नहीं बढ़ाते हैं। वहाँ कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान बेटा जिसके लिए आवश्यकता चही गई थी, सरकारी सेवा में शामिल हो गया था। हस्तगत मामले में, आवेदकों के लिए आवश्यकता थी, इसलिए जिनकी रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी। इस प्रकार *गया प्रसाद* स्पष्ट रूप से हस्तगतप्रकरण से भिन्नता रखता है।

एक और कारण है जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त किये जाने योग्य है। जैसा कि पहले कहा गया है, इस न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 21 की उप-धारा (7) के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए 29 अक्टूबर, 1999 को नोटिस जारी किया गया था। उक्त धारा की उप-धारा (1) के तहत मकान मालिक को कुछ निश्चित आधारों पर किराएदार से किरायेथुदा परिसर का आधिपत्य प्राप्त कर सकते हैं। जिन आधारों में से एक मकान मालिक द्वारा आवासीय उद्देश्यों के लिए या किसी भी पेशे, व्यापार या व्यापार के उद्देश्यों के लिए सद्भाविक आवश्यकता है। उप-धारा (1) को धारा 21 की उप-धारा (7) के साथ पढ़ना होगा। धारा 21 का सुसंगत भाग निम्नानुसार है;

"21. किरायेदार के कब्जे वाले भवन को दिलवाये जाने की कार्यवाही।

(1) निर्धारित प्राधिकारी, मकान मालिक द्वारा परिसर से किरायेदार के बेदखली जो किरायेदारी या उसका कोई निर्दिष्ट भाग में है निम्न आधारों का अस्तित्व में होने पर कर सकता है:

(क) यह कि भवन की सद्भाविक आवश्यकता है या तो अपने मौजूदा स्थिति में या ध्वस्त तथा नये निर्माण जो मकान मालिक द्वारा अपने या अपने परिवार के किसी सदस्य के व्यवसाय के लिए, या वह व्यक्ति जिसका लाभ के लिए उसके पास है, या तो आवासीय के लिए किसी भी पेशे, व्यापार या व्यापार के उद्देश्यों के लिए, या जहाँ मकान मालिक किसी सार्वजनिक धर्मार्थ संस्था का न्यासी है, न्यास के उद्देश्यों के लिए विश्वास;

.....

(7) जहां के खंड (ए) के तहत एक आवेदन के लंबित होने के दौरान उप-धारा (1), मकान मालिक की मृत्यु हो जाती है, उसके कानूनी प्रतिनिधि को उनके आधार पर इस तरह के आवेदन पर आगे मुकदमा चलाने का अधिकार अपनी

आवश्यकता मृतक के प्रतिस्थापन की आवश्यकता के आधार होगा।"

धारा 21 की उप-धारा (1) खण्ड अ और उप-धारा (7) का संयुक्त पठन करने से यह स्पष्ट होता है कि जहां मकान मालिक द्वारा कब्जे की मांग की जाती है सद्भाविक आवश्यकता के आधार पर की जाती है और आवेदन के लंबित रहने के दौरान, मकान मालिक की मृत्यु हो जाती है तो उसके कानूनी प्रतिनिधि को उनके आधार पर इस तरह के आवेदन पर आगे मुकदमा चलाने का अधिकार अपनी आवश्यकता मृतक के प्रतिस्थापन की आवश्यकता के आधार पर कर सकता है।

हमारे द्वारा उल्लिखित निर्णयों के आलोक में, विशेष रूप से हसमत राय और अधिनियम की धारा 21 की उप-धारा (7) के प्रावधानों के अनुसार, उच्च न्यायालय को मामले पर विचार कर निष्कर्ष करना होगा।

उपरोक्त उल्लिखित कारणों से, अपील स्वीकार किये जाने योग्य प्रकट होती है व उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त किया जाने योग्य है। इस मामले को उच्च न्यायालय को इस निर्देश के साथ पुनः भेजा जाता है कि उच्च न्यायालय दोनों आवेदकों की मृत्यु की बाद की घटना और अधिनियम की धारा 21 की उप-धारा (7) के प्रावधानों पर भी विचार करेगा और पक्षों को सुनने के बाद विधिनुसार उचित आदेश पारित करेगा।

कब्जे के संबंध में, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, प्रत्यर्थागण के अनुसार, अपील अदम में खारिज होने तथा रिस्टोरेशन से पहले ही वे दुकान का कब्जा ले चुके हैं। अपीलार्थियों के अनुसार हालाँकि, कब्जा उनके पास बना हुआ है। इस संबंध में हम कोई राय व्यक्त नहीं करते हैं। जब हम इस मामले को उच्च न्यायालय को इस निर्देश के साथ भेज रहे हैं कि उच्च न्यायालय कानून के अनुसार मामले का नए सिरे से फैसला करेगा, तो उच्च न्यायालय द्वारा अंतिम निर्णय के अनुरूप उचित आदेश पारित किया जाएगा। तब तक यथास्थिति बनी रहेगी। कोस्ट के बारे में कोई आदेश नहीं दिया जा रहा है।

अपील की आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेन्स टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सलोनी माथुर (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।